International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
May-June 2018, Volume-5, Issue-3
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

'वैश्विक शांति की दिशा में भगवद्गीता की प्रासंगिकता'

डॉ. अलका बागला
सह आचार्य, संस्कृत
राजकीय महाविद्यालय, झालावाड़

श्रीमती विनीता (गुप्ता) राय
सह आचार्य, संस्कृत
राजकीय महाविद्यालय, झालावाड

श्रीगद्भवद्गीता भगवान् की दिव्यातिदित्य वाणी है। श्रीमद्भवद्गीता एक ऐसा अद्भुत, विलक्षण, समग्र ग्रन्थ है, जो सर्वजन कल्याणकारी, आनन्ददायिनी, सर्वग्राहिणी तथा असीम भावों से परिपूर्ण है।

'असंशय समग्रं माम्'[1] अर्थात गीता समग्र की वाणी है। मानव जीवन में सर्वाधिक अपेक्षित वस्तु है– 'शान्ति'। शांति जीवन की वह अनुभूति है जहाँ सारे सुख समाहित होते है। हमारा मन स्थिर रहता है। किन्तु इस भौतिकता की अंधी दौड़ में हम आत्मा की शान्ति से बहुत दूर चले गये है। इस दुःखालय एवं अशाश्वत मृत्यु संसार सागर में हर व्यक्ति सुख शांति की तलाश चाहता है। क्योंकि सांसारिक भोगो का सुख आरम्भ में अमृत की तरह और परिणाम में विष की तरह होता है। अविवेकी मनुष्य आरम्भ को ही महत्व देता है, सांसारिक भोगो को ही सब कुछ मानकर आसक्त रहता है। तथा उन सुख सुविधाओं को पूरा करने की लालसा में ही दिन–रात लगे हुए है और अपनी आत्मा की शांति और स्थिरता खो बैठते है। इसके विपरित गीता में बताया कि विवेकी मनुष्य आरम्भ को न देखकर परिणाम को देखता है अतः वह भोगो में लिप्त नही होता।

'न तेषु रमते बुधः' [2]

यदि हम अपने जीवन को चिन्ता और तनाव से मुक्त करना चाहते है, सुखी–स्वस्थ, जीवन जीना चाहते है तो हमे आत्मा की दुर्लभ शांति प्राप्त करना जरूरी है। इसलिए गीता स्पष्ट शब्दों में कहती है–

'अशान्तस्य कुतः सुखम्'? [3]

अर्थात अशांत को सुख कहाँ ।

इसलिए भगवान ने सुखशांति रूपी दोनो दुर्लभ तत्व हमें तत्काल एक साथ मिलने का मर्म अत्यन्त ही सरल व सुगम सूत्र गीता 12 अध्याय के 72 श्लोक में दे दिया जोकि इस शोध लेख का विषय है–

त्यागात् शांतिः अनन्तरम्[4]

अर्थात त्याग से तत्काल शांति प्राप्त होती है।

गीता का यह अर्धश्लोकी मन्त्र स्वार्थी मानव के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

मानव मृगमरीचिका रूपी भौतिक संसार सागर में फँस कर अशान्त व दुःखी हो जाता है। जबकि असत्य से सत्य की ओर अंधकार से प्रकाश की ओर एवं मृत्यु से अमरता की ओर उर्ध्वगामी होना ही मानव जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए। यह लक्ष्य भेद कैसे हो यही गीता में भगवान ने प्रतिपादित किया है।

वास्तव में तृष्णाओं, कामनाओं का त्याग करने वाला संयमी ही इस भोग व काम प्रधान संसार में सुखी व शांत रह सकता है।

निर्मानमोहा जितसंगदोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।

द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैः गच्छन्त्यमूढ़ाः पदमव्ययंतत्।।[5]

विधाता की यह सृष्टि गुण अवगुणों से भरी हुई है अतएव गुण–दोषमयी इस संसार में क्या ग्रहणीय है व क्या त्याज्य इसका ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। इस भोग व कामनाओं से परिपूर्ण संसार में व्यक्ति को उचित संतुलन बनाए रखने की विधि गीता में इस प्रकार बताई है– जैसे ना ना नदियों का जल सब ओर से परिपूर्ण अचल प्रतिष्ठा वाले समुद्र में उसको विचलित किये बगैर समा जाते है, वैसे ही सब भोग स्थिर प्रज्ञ पुरूष में बिना किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये समा जाते है। एक वही पुरूष परम शांति को प्राप्त होता है न कि भोगों को चाहने वाला।

आपूर्य माणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशान्ति यद्वत।
तदूत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।[6]

गीता में भगवान मनुष्य को सांसारिक भोगो को भोगते हुऐ व धर्म विरूद्ध कामनाओं की पूर्ति करते हुऐ भी शांत व सुखी रहने की कला सिखाते है एवं वही सद्ज्ञान परमशान्ति दायक है जैसा कि कहा गया है कि– **ज्ञान लब्ध्वा परा शान्तिमाचिरेणाधि गच्छति।**[7]

गीता में बताया कि भगवतज्ञान व भगवान को अपना स्वार्थ रहित हितेषी व प्रेमी जानने वाला ही शान्ति को प्राप्त होता है।

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोक महेश्वरम्।
सुह्रद्रं सर्वभूतानां ज्ञात्वा शान्तिमृच्छति।[8]

गीता में नैष्ठिक शांति प्राप्ति की प्रक्रिया भगवान इस प्रकार बताते है, कि वश में किए हुए मनवाला योगी इस प्रकार आत्मा को निरन्तर मुझमें लगाता हुआ, मुझ में रहने वाला परमानन्द की पराकाष्ठा रूप शान्ति को प्राप्त होता है।

युन्जुन्नेवं सदात्माने योगी नियतमानसः।
शांति निर्वाणपरमां मत्संस्थामाधिगच्छति।।[9]

वर्तमान में मनुष्य की सबसे बड़ी चिन्ता अपने योगक्षेम (अप्राप्तवास्तु की प्रप्ति योग है जबकि प्राप्त की रक्षा क्षेम है) को लेकर रहती है एवं उसकी चिन्ता में उसका सुख चैन छिन जाता है। भगवान ने उसकी इसी समस्या का समाधान देते हुए सभी सत्यधर्म साधनो को इस संबंध में अभयदान देते हुए कहते है– 'जो

अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर को चिन्तन करते हुए निष्कामभाव से भजते है, उन निरन्तर मेरा चिन्तन करने वाले पुरूषो का योगक्षेम में स्वयं प्राप्त कर देता हूँ।

अनन्याश्चिन्तयतो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तनां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।[10]

यदि कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्य भाव से मेरा भक्त होकर मुझको भजता है, तो वह साधु ही मानने योग्य है क्योंकि वह यथार्थ निश्चय वाला है अर्थात् उसने यह सुनिश्चित कर लिया है कि भगवान की भक्ति के समान अन्य कुछ भी नहीं है। इसलिए वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सदेव रहने वाली शांति को प्राप्त होता है। भगवान कहते है कि अर्जून! तू निश्चयपूर्वक सत्य जान कि मेरा भक्त नष्ट नही होता–

अपि चेत्सुदराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग् व्यवसितो हिसः।।
क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शाश्वत् शान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।।[11]

इस प्रकार वे अर्जुन के माध्यम से अपनी उक्त घोषणा सर्व साधारण तक पहुंचाना चाहते है यदि इसके बावजूद कोई दुराचारी बनकर दुःखी व अशांत रहे तो यह उसका आत्मघाती कृत्य होगा।

भगवान की दृष्टि में सब साधनो व त्याग से बढ़कर कर्मफल का त्याग ही है क्योंकि किसी भी व्यक्ति का एक क्षण भी निष्क्रिय रहना सम्भव नही है। त्याग की महिमा को गीता में इस प्रकार बताया, भगवान स्वयं कहते है, अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से मेरा ध्यान व ध्यान से भी बढ़कर सब कर्मो के फल का त्याग श्रेष्ठ है, क्योंकि त्याग से तत्काल परम शांतित प्राप्त हो जाती है–

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद् ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफल त्यागत्यागाच्छान्तिरनन्तरम्।।[12]

ऐसी अवस्था में हम कोई भी साधन करते है परन्तु जब तक कर्मफल के त्याग की साधना नही करेंगे तब तक शांति के अधिकारी नहीं हो सकेंगे। कर्मफल के त्याग का अर्थ कर्म में फलासक्ति का त्याग ही है एवं वही भक्ति है।

विहाय कामास्येः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममोनिरहकांरः सशान्तिमधिगच्छति।।[13]

कर्मयोगी को न तो कर्मफल का हेतु बनना चाहिए व न ही अकर्मण्य, अपितु योगस्थ होकर कर्तव्य कर्म करना चाहिए।

समत्वंयोग उच्यते।[14]

शांति दैवीय सम्पदा है उसको धारणं करने वाला ही 'देव' होता है। गीता में भगवान अर्जुन के माध्यम से सभी सत्य धर्म साधनों को उसमें धारक होने का पूरा–पूरा आश्वासन देते है।[15]

गीता के अनुसार शांतियुक्त साधक ही सच्चिदानंधन ब्रह्म में अनन्यभाव से रिथत होने का पात्र होता है।[16] एवं इसके लिए अनन्य रूप से 'सर्वतोभावेन भगवत शरणागति ही एकमात्र कारण हो सकता है। वही वरणीय है। इसलिये भगवान कहते है– हे भारत, तू सब प्रकार से उस परमेश्वर की शरण में जा उसकी कृपा से तू परमशांति तथा परमधाम को प्राप्त होगा। तू सम्पूर्ण धर्मो को अर्थात कर्तव्य कर्मो को त्यागकर अर्थात उनके फलो को मेरे ऊपर छोड़कर मुझ सर्व शक्तिमान सर्वाधार एक ही परमेश्वर की शरण में आजा।[17]

अनादिकाल से त्याग की महिमा असन्दिग्ध है, त्याग के बल पर ही दुनिया कायम है, सुख शांति त्याग के सेवक है। गीता का प्रादुर्भाव हमे त्यागी बनाने के लिए हुआ है। यदि गीता शब्द का बार–बार उच्चारण किया जाये तो उससे त्यागी–त्यागी स्वमेव ही प्रतिध्वनित होने लगता है।[18]

गीता के अनुसार कर्मफल का त्याग करने वाला ही सच्चा त्यागी है। इस जगत में जो कुछ है, वह ईश्वरीय देन है, अतः उसको त्याग पूर्वक उपभोग करना ही ईशावासोपनिषद का उद्घोष है–

ईशावास्यमिदं सर्वं किन्च जगत्यां जगत्।
तेन व्यक्तेन भुंजीथा मागृधः कस्यस्विद् धनम्।।
कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वायि नान्यथोऽसि न कर्मलिप्यतेनरः।।[19]

गीता की स्पष्ट उद्घोषणा है कि– ''कर्मण्यवाधिकरस्ते'' व्यक्ति को कभी कर्म नहीं छोड़ना चाहिए। फल त्याग कर्म त्याग नही है। कर्म के बिना जीवन सम्भव नहीं है। कर्म करते हूए ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है। कर्म की कुशलता को ही गीता में 'योग' कहा गया है।

योगः कर्मसुः कौशलम्।[20]

इस योग साधना से हमें वांछित सिद्धि अर्थात परम दुर्लभ तत्व 'शान्ति' की प्राप्ति हो जायेगी। शुक्ल यजुर्वेद के मनः सूक्त में भी मंगलकामना करते हुए कहा है कि–

तनमे मनः शिवसंकल्पमस्तु।[21]

अर्थात मेरा मन अच्छे संकल्पो वाला हो, जिससे मैं शान्ति के लिए प्रयत्न करता हूँ।

गीता समत्व वाले मनुष्य को संन्यासी बनकर संसार को त्यागने के लिए नही कहती अपितु उसे कर्म करने के लिए प्रेरित करती है, जिससे वह संसार में अपना आदर्श स्थापित कर सकें। ऐसा ही व्यक्ति गीता में कर्मयोगी बताया है और वह स्थितप्रज्ञ, योगारूढ़ भक्त और गुणातीत की श्रेणी में आता है। केवल मात्र मनुष्य को बताये हुए मार्ग पर चलना है ओर उसके सिद्वान्तो को जीवन में लाना है।

यद्यद् आचरति श्रेष्ठस्तत्त देवेतरोजनाः।[22]

गीता में जो त्याग बताया गया है उसमें इस बात पर ही बल दिया गया है कि आप निष्क्रिय न बनें, अपना कार्य करते हुए त्याग करें, तथा हम ईश्वर में ओर नैतिक मूल्यो में आस्था रखें तभी हम शांति प्राप्त कर सकते है।

आज आवश्यक है हमारी नई पीढ़ी को हमारे सनातन ग्रन्थों का ज्ञान हो और उनको आचरण में लाकर जीवन को प्रशस्त बनायें क्योंकि जीवन की विषम से विषम परिस्थितियों का समाधान हमें गीता में मिलता है।

1. गीता– 7,1
2. भगवद्गीता– 5,22
3. भगवद्गीता– 2,66
4. भगवद्गीता– 12,12
5. भगवद्गीता– 15,5
6. भगवद्गीता– 2,70
7. भगवद्गीता– 4,39
8. भगवद्गीता– 5,29
9. भगवद्गीता– 6,15
10. भगवद्गीता– 9,22
11. भगवद्गीता– 9, 30–31
12. भगवद्गीता– 12,12
13. भगवद्गीता– 2,71
14. भगवद्गीता– 3,47
15. भगवद्गीता– 1,3
16. भगवद्गीता– 18,53
17. भगवद्गीता– 18,48
18. भगवद्गीता– 4,20
19. ईशावास्योपनिषद, मन्त–1,2
20. गीता– 2,50
21. यजुर्वेद – 34,6
22. गीता– 3,21